पटना उच्च न्यायालय के क्षेत्राधिकार में

शैलेन्द्र कुमार पांडेय

बनाम

भारत संघ और अन्य

2016 का दीवानी रिट क्षेत्राधिकार वाद संख्या 13854

में

2020 का लेटर पेटेंट अपील संख्या 186

29 नवंबर, 2023

(माननीय न्यायमूर्ति श्री पी. बी. भजंत्री और माननीय न्यायमूर्ति श्री रमेश चंद मालवीय)

विचार के लिए मुद्दा

क्या अपीलकर्ता के खिलाफ अनुशासनात्मक कार्यवाही, विशेष रूप से आरोप संख्या 1 के संबंध में, उनकी सेवानिवृत्ति के बाद बिहार पेंशन नियमों (असंशोधित) के नियम 43(बी) के तहत पुनः खोली और जारी रखी जा सकती है, और क्या नियम 43(बी) को लागू करने के लिए राज्य को वित्तीय नुकसान होना एक आवश्यक शर्त है।

हेडनोट्स

बिहार पेंशन नियम, नियम 43(बी) (अपरिवर्तित) – दायरा और प्रयोज्यता – केवल आर्थिक नुकसान तक सीमित नहीं – न्यायालय ने स्पष्ट किया कि बिहार पेंशन नियम के नियम 43(बी) (अपरिवर्तित) के तहत न केवल आर्थिक नुकसान से संबंधित मामलों में बल्कि सेवा के दौरान "गंभीर कदाचार" के

कृत्यों के लिए भी पेंशन रोके जाने की अनुमति है। नियम 43(बी) में "या" शब्द का प्रयोग असंगत स्थितियों को इंगित करता है। समन्वय पीठ की पिछली व्याख्या ने इसके आवेदन को आर्थिक नुकसान से संबंधित मामलों तक सीमित कर दिया था, जिसे पर इनक्यूरियम(लापरवाही या अज्ञानता के कारण) माना गया। [देखें: आंध्र प्रदेश सरकार बनाम बी. सत्यनारायण राव, (2000) 4 एससीसी 262 – पर इनक्यूरियम का नियम, भारत संघ बनाम एसके सैगल, (2007) 14 एससीसी 556, उत्तर प्रदेश राज्य बनाम सिंथेटिक्स एंड केमिकल्स लिमिटेड, (1991) 4 एससीसी 139 (पैरा 13, 17, 19, 24)

बिहार पेंशन नियम, नियम 43(बी) – सेवानिवृत्ति के बाद विभागीय कार्यवाही शुरू करने की आवश्यकता – न्यायालय ने माना कि नियम 43(बी) के तहत विभागीय कार्यवाही सेवानिवृत्ति के बाद तभी शुरू की जा सकती है जब प्रावधान के तहत शर्तें पूरी हों: कदाचार कार्यवाही शुरू होने से चार साल पहले की अवधि से संबंधित होना चाहिए, और राज्य सरकार की पूर्व मंजूरी लेनी होगी। (पैरा 12, 13)

सेवा कानून - अनुशासनात्मक कार्यवाही - दस्तावेजों तक पहुंच प्रदान किए बिना एकपक्षीय साक्ष्य के आधार पर जांच के लिए मामले को वापस भेजने की वैधता - विद्वान एकल न्यायाधीश ने आरोप संख्या 1 (सीडी के आधार पर नैतिक कदाचार का आरोप लगाना) में नए सिरे से जांच के लिए मामले को वापस भेज दिया था, बिना याचिकाकर्ता को आरोप स्थापित करने के लिए भरोसा किए गए फोरेंसिक विज्ञान प्रयोगशाला की रिपोर्ट की एक प्रति प्रदान किए। डिवीजन बेंच ने माना कि चूंकि याचिकाकर्ता के पास सीडी की सामग्री को चुनौती देने या जवाब देने का कोई अवसर नहीं था, इसलिए जांच के लिए

रिमांड उचित था, लेकिन नियम 43 (बी) को लागू किए बिना। (पैरा 9, 10, 11)

मिसालें - पिछले निर्णयों की व्याख्या - बाध्यकारी अनुपात और अवलोकन पर इनक्यूरियम या सब साइलेंटियो के बीच अंतर - न्यायालय ने कई पूर्व निर्णयों (उर्मिला शर्मा, शारदा प्रसाद सिन्हा, कुमार अजीत सिंह सहित) का विश्लेषण किया और निष्कर्ष निकाला कि वे निर्णय बिना संशोधित नियम 43(बी) पर उचित विचार किए दिए गए थे, और इस प्रकार बाध्यकारी मिसालें नहीं हैं। इसने दोहराया कि बिना किसी प्रासंगिक वैधानिक प्रावधान की चर्चा के या बिना किसी गुप्त तरीके से पारित किए गए उदाहरणों पर बाध्यकारी के रूप में भरोसा नहीं किया जा सकता है। [देखें: डिवीजनल कंट्रोलर, केएसआरटीसी बनाम महादेव शेट्टी, (2003) 7 एससीसी 197, थोटा शेषारथम्मा बनाम थोटा मणिक्यम्मा , (1991) 4 एससीसी 312] [देखें: लैंकेस्टर मोटर कंपनी बनाम ब्रेमिथ लिमिटेड, (1941) 1 केबी 675] [देखें: आईसीआईसीआई बैंक लिमिटेड बनाम ग्रेटर बॉम्बे नगर निगम, एआईआर 2005 एससी 3315 (पैरा 14-24)

न्यायिक अनुशासन - मिसाल पर भरोसा करने से पहले क़ानून की व्याख्या करने की बाध्यता - न्यायालय ने माना कि प्रासंगिक वैधानिक प्रावधान (इस मामले में, बिहार पेंशन नियम के नियम 43(बी)) पर विचार किए बिना या उसकी व्याख्या किए बिना दिए गए निर्णय बाद की पीठों को बाध्य नहीं कर सकते। ऐसे कोई भी निर्णय रेशियो डिसीडेन्डी नहीं हैं और विस्तृत व्याख्या को रद्द नहीं कर सकते। (पैरा 22-24)

प्रक्रियात्मक निर्देश – जांच समयबद्ध तरीके से पूरी करना – न्यायालय ने अनुशासनात्मक प्राधिकारी को 04.02.2011 को मूल रूप से तैयार किए गए आरोप संख्या 1 पर जांच तीन महीने के भीतर पूरी करने का निर्देश दिया।

न्यायालय ने स्पष्ट किया कि यदि पिछला जांच अधिकारी उपलब्ध नहीं है, तो नियम 43(बी) (असंशोधित) का अनुपालन सुनिश्चित करते हुए जांच को आगे बढ़ाने के लिए एक नया जांच अधिकारी नियुक्त किया जा सकता है। (पैरा 27)

न्याय दृष्टान्त

उर्मिला शर्मा उर्फ उर्मिला सिंह बनाम बिहार राज्य **2010 (3) पीएलजेआर 845**; बिहार राज्य बिजली बोर्ड बनाम शारदा प्रसाद सिन्हा एवं अन्य **2007 (3) बीएलजेआर 2972**, धीरेन्द्र प्रसाद श्रीवास्तव बनाम बिहार राज्य एवं अन्य, **सीडब्लूजेसी 2014 का सं. 17198**, बिहार राज्य बनाम कुमार अजित सिंह, **एलपीए 2018 का सं. 1682**; संभागीय नियंत्रक, केएसआरटीसी बनाम महादेव शेट्टी और अन्य **(2003) 7 एससीसी 197**, आंध्र प्रदेश सरकार बनाम बी. सत्यनारायण राव, **(2000) 4 एससीसी 262**, थोटा शेषरत्नम्मा बनाम थोटा मणिक्यामना (मृत) एलआर के माध्यम से **(1991) 4 एससीसी 312**, भारत संघ बनाम एस के सैगल **(2007) 14 एससीसी 556**; पैसनेर बनाम गुडरिच **(1955) 2 आल इआर 530**; आईसीआईसीआई बैंक लिमिटेड बनाम ग्रेटर बॉम्बे म्युनिसिपल कारपोरेशन **एआईआर 2005 एससी 3315**; ए-वन ग्रेनाइट बनाम उत्तर प्रदेश राज्य **(2001) 3 एससीसी 537**; उत्तर प्रदेश राज्य बनाम सिंथेटिक्स एंड केमिकल्स लिमिटेड **(1991) 4 एससीसी 139**; दिल्ली म्युनिसिपल कारपोरेशन बनाम गुरनाम कौर **(1989) 1 एससीसी 101**; बी शमा राव बनाम पांडिचेरी केंद्र शासित प्रदेश एआईआर **1967 एससी 1480**; मोसमात कर्मी बनाम अमरु, **(1972) 4 एससीसी 86**; सेठ बद्री प्रसाद बनाम कांसो देवी, **(1970) 2 एससीसी 80**

अधिनियमों की सूची

बिहार सरकारी सेवक (वर्गीकरण, नियंत्रण एवं अपील) नियमावली, 200; बिहार पेंशन नियमावली; बिहार सरकारी सेवक आचरण नियमावली, 1976; अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम

मुख्य शब्दों की सूची

निलंबन; विभागीय जाँच; बिहार पेंशन नियमावली; अनुशासनात्मक कार्यवाही; फोरेंसिक विज्ञान प्रयोगशाला; वित्तीय हानि; गंभीर कदाचार

प्रकरण से उत्पन्न

2016 का सिविल रिट क्षेत्राधिकार वाद संख्या 13854

पक्षकारों की ओर से उपस्थिति

अपीलकर्ता की ओर से: श्री प्रभात रंजन, अधिवक्ता

प्रतिवादियों की ओर से: श्री प्रभात कुमार वर्मा (एएजी-3); श्री सरोज कुमार शर्मा, एएजी-3 के सहायक।

रिपोर्टर द्वारा हेडनोट बनाया गया: आकांक्षा मालवीय, अधिवक्ता

माननीय पटना उच्च न्यायालय का निर्णय/आदेश

पटना उच्च न्यायालय के क्षेत्राधिकार में

2016 का दीवानी रिट क्षेत्राधिकार वाद संख्या 13854

में

2020 का लेटर पेटेंट अपील संख्या 186

==========

शैलेंद्र कुमार पांडे, पिता- श्री हरेंद्र नाथ पांडे, वर्तमान निवासी- रोड नंबर 1, राजीव नगर, पुलिस थाना - राजीव नगर, डाकघर- केशरी नगर, पटना- 24

... अपीलकर्ता।

बनाम

1. बिहार राज्य, प्रधान सचिव, सामान्य प्रशासन विभाग, बिहार सरकार, पटना के माध्यम से।
2. संयुक्त सचिव, सामान्य प्रशासन विभाग, बिहार सरकार, पटना।
3. अपर सचिव, सामान्य प्रशासन विभाग, बिहार सरकार, पटना।

... प्रतिवादी।

==========

उपस्थितिः

अपीलकर्ता की ओर से: श्री प्रभात रंजन, अधिवक्ता।

प्रतिवादियों की ओर से: श्री प्रभात कुमार वर्मा (एएजी-3)।

श्री सरोज कुमार शर्मा, एएजी-3 के सहायक।

==========

कोरम: माननीय न्यायमूर्ति श्री पी. बी. भजंत्री

और

माननीय न्यायमूर्ति श्री रमेश चंद मालवीय

मौखिक निर्णय

(प्रति: माननीय न्यायमूर्ति श्री पी. बी. भजंत्री)

दिनांक: 29-11-2023

<u>आई.ए. संख्या 1 वर्ष 2020</u>

वर्ष 2020 के एल.पी.ए. संख्या 186 से उत्पन्न आई.ए. संख्या 1 की सुनवाई की गई। प्रतिवादियों ने वर्ष 2020 की आई.ए. संख्या 1 पर विलंब क्षमा हेतु कोई आपत्ति दर्ज नहीं की है। इसके अतिरिक्त, वर्ष 2020 के आई.ए. संख्या 1 में 190 दिनों के विलंब क्षमा हेतु प्रस्तुत दलीलों पर ध्यान देते हुए, हम 190 दिनों के विलंब को क्षमा करने के कारणों से संतुष्ट हैं। तदनुसार, आई.ए. संख्या 1, वर्ष 2020 को वर्तमान एल.पी.ए. दायर करने में 190 दिनों के विलंब को क्षमा करते हुए अनुमति दी जाती है।

<u>वर्ष 2020 के एल.पी.ए. सं.186</u>

2. संबंधित पक्षों के विद्वान अधिवक्ताओं की सहमति से, मुख्य मामले (एल.पी.ए. सं.186, वर्ष 2020) को अंतिम निपटान हेतु लिया जाता है।

3. अपीलकर्ता उप विकास आयुक्त के पद पर थे। उन्हें राज्य संवर्ग, अर्थात् बिहार राज्य सेवा प्रशासन, में नियुक्त किया गया था। उन्हें कुछ कथित आरोपों के आधार पर 26.03.2010 को निलंबित कर दिया गया था। बिहार सरकारी सेवक (वर्गीकरण, नियंत्रण एवं अपील) नियमावली, 2005 (संक्षेप में 'सी.सी.ए. नियमावली, 2005') के अंतर्गत 04.02.2011 को विभागीय जाँच के अधीन किया गया था। अपीलकर्ता द्वारा आरोप ज्ञापन पर दिए गए स्पष्टीकरण से संतुष्ट नहीं हुए और इसके परिणामस्वरूप जाँच एवं प्रस्तुतीकरण अधिकारियों की नियुक्ति करके विभागीय जाँच की गई। जाँच अधिकारी ने अनुशासनात्मक प्राधिकारी को रिपोर्ट प्रस्तुत कर दी थी। अनुशासनात्मक प्राधिकारी ने संचयी प्रभाव से एक वेतन वृद्धि रोकने, सेवानिवृत्ति की तिथि तक पदोन्नति रोकने, निलंबन अवधि के दौरान निर्वाह भत्ते के अलावा किसी भी चीज़ का हकदार नहीं होने का दंड लगाया।

4. दिनांक 18.09.2014 के दंड आदेश से व्यथित होकर, याचिकाकर्ता ने दंड आदेश का विरोध करते हुए सी.डब्ल्यू.जे.सी. संख्या 13854/2016 दायर किया। विद्वान एकल न्यायाधीश ने दंड आदेश को रद्द कर दिया और मामले को जाँच अधिकारी को वापस भेज दिया ताकि आरोप संख्या 1 के संबंध में जाँच केवल तभी की जा सके जब याचिकाकर्ता को फोरेंसिक विज्ञान प्रयोगशाला की रिपोर्ट दी जाए और याचिकाकर्ता द्वारा प्रस्तुत की जाने वाली किसी भी दलील पर कानून के अनुसार विचार किया जाएगा। आगे आदेश दिया जाता है कि:

"हालाँकि, यह स्पष्ट किया जाता है कि याचिकाकर्ता पहले ही सेवानिवृत्त हो चुका है, इसलिए केवल बिहार पेंशन नियमावली की धारा 43(बी) के तहत कार्यवाही शुरू की जा सकती है।"

5. अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने तर्क दिया कि विद्वान एकल न्यायाधीश ने आरोप संख्या 1 के संबंध में मामले को जांच के लिए वापस भेजने में त्रुटि की है, जिसे बिहार पेंशन नियमावली के नियम 43(ख) के अंतर्गत जांच शुरू करने के साथ पढ़ा जाए। यह तर्क दिया गया है कि राज्य सरकार को कोई वित्तीय हानि नहीं हुई है। इसलिए, बिहार पेंशन नियमावली के नियम 43(ख) के अंतर्गत मामले को जांच के लिए वापस भेजने का प्रश्न गलत है। यह भी तर्क दिया गया है कि पूर्व में की गई जांच में आरोप संख्या 1 सिद्ध नहीं हुआ था। इसलिए, आरोप संख्या 1 के संबंध में जांच करने या मामले को जांच के लिए वापस भेजने का प्रश्न सही नहीं है। उपर्युक्त तर्कों के समर्थन में, उन्होंने बिहार पेंशन नियमावली के असंशोधित नियम 43(ख) का हवाला दिया है। उन्होंने तीन निर्णयों का भी हवाला दिया है, अर्थात् (i) 2010 (3) पीएलजेआर 845 (उर्मिला शर्मा उर्फ उर्मिला सिंह बनाम बिहार राज्यमुख्य सचिव, बिहार सरकार, पटना एवं अन्य के माध्यम से), (ii) 2007 (3) बीएलजेआर 2972 (बिहार राज्य विद्युत बोर्ड बनाम शारदा प्रसाद सिन्हा एवं अन्य) (अनुच्छेद-8), (iii) सी.डब्ल्यू.जे.सी. सं.17198/2014 (धीरेंद्र प्रसाद श्रीवास्तव बनाम बिहार राज्य एवं अन्य) 17.10.2023 को तय हुआ और आगे सी.डब्ल्यू.जे.सी. सं.18055/2018 में पारित एल.पी.ए. संख्या 1682/2018 के निर्णय पर भरोसा किया, जो 06.02.2023 को तय हुआ।

6. प्रतिवादी राज्य के विद्वान वकील ने इसके विपरीत, उपर्युक्त तर्कों का विरोध किया और तर्क दिया कि असंशोधित नियम 43(ख) को पढ़ने पर, इसमें एक घटक शब्द 'या' है। इसलिए, नियम 43(ख) के तहत जाँच शुरू करने या दंड का आदेश देने के लिए यह आवश्यक नहीं है कि राज्य के खजाने को आर्थिक नुकसान हुआ हो। नियम 43(ख) लागू करने के उद्देश्य से अन्य सामग्रियों पर भी विचार किया जा सकता है। अतः, विद्वान एकल न्यायाधीश के आदेश में कोई त्रुटि या कमी नहीं है जिससे हस्तक्षेप किया जा सके और विद्वान एकल न्यायाधीश के आदेश की पुष्टि करते हुए वर्तमान एल.पी.ए. को अस्वीकार करना उचित है।

7. संबंधित पक्षों के विद्वान अधिवक्ताओं को सुना गया।

8. अपीलकर्ता पर निम्नलिखित आरोप लगाए गए:

(I) प्रमंडलीय आयुक्त, तिरहुत प्रमंडल, मुजफ्फरपुर द्वारा सौंपी गई सीडी, यौन गतिविधियों में उसकी संलिप्तता दर्शाती है, जो बिहार सरकारी सेवक आचरण नियमावली, 1976 के प्रावधानों के विपरीत है।

(II) अपने कार्यालय में, उसने वृक्ष राम, प्रधान लिपिक-सह-लेखाकार को प्रताड़ित किया है और इस दुर्व्यवहार के लिए, अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति अधिनियम के प्रावधानों के तहत मुकदमा संख्या 632/2009 के तहत एक आपराधिक मामला दर्ज किया गया था। उसने एक अन्य अनुसूचित

जाति कर्मचारी, मुनेश्वर मांझी को भी वेतन जारी न करके प्रताड़ित किया है और इसके लिए याचिकाकर्ता के खिलाफ मुकदमा संख्या 600/09 के तहत एक आपराधिक मामला भी दर्ज किया गया था।

(III) बिना किसी सूचना और अनुमति के, वह हमेशा मुख्यालय से अनुपस्थित रहता था और न तो बैठक में उपस्थित होता था और न ही प्राधिकरण को सूचित करता था।

(IV) नरेगा योजना के अंतर्गत बीआरजीएफ के कोष से एक कंप्यूटर खरीदा गया था और उस खरीद में उसने दिशानिर्देशों का पालन नहीं किया।

9. अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि विद्वान एकल न्यायाधीश ने आरोप संख्या 1 के संबंध में जांच करने के लिए मामले को अनुशासनात्मक प्राधिकारी या जांच प्राधिकारी को वापस भेजने में त्रुटि की है। आरोप संख्या 1 पिछली जांच में साबित नहीं हुआ था। इसलिए, आरोप संख्या 1 के संबंध में मामले को वापस भेजना गलत है। इस स्तर पर, विद्वान एकल न्यायाधीश के आदेश को पुनः प्रस्तुत करना आवश्यक है, जो इस प्रकार है:

"याचिकाकर्ता के वकील का कहना है कि प्राधिकरण सीडी की रिपोर्ट पर विचार नहीं कर सकता था क्योंकि उसे जाँच के दौरान प्रस्तुत नहीं किया गया था क्योंकि उसे सीडी की वास्तविकता का

सामना करने और उसका खंडन करने का कोई अवसर नहीं दिया गया था। उन्होंने आगे कहा है कि अंतिम समय में उन्हें अगली कक्षा में पदोन्नत किया जाना था, लेकिन उन्होंने साजिश रची और याचिकाकर्ता के खिलाफ गलत आरोप लगाया ताकि उन्हें अगली कक्षा में पदोन्नत होने का अवसर न मिल सके। उन्होंने आगे कहा है कि संबंधित समय पर जिला मजिस्ट्रेट के याचिकाकर्ता के साथ अच्छे संबंध नहीं थे और वह पर्दे के पीछे का व्यक्ति था और उसने याचिकाकर्ता के खिलाफ मनगढ़ंत कहानी गढ़ी है। जहाँ तक यौन संबंध के संबंध में प्रथम आरोप का संबंध है, ऐसा प्रतीत होता है कि आदेश पारित करते समय प्राधिकरण ने रिपोर्ट को ध्यान में रखा। फोरेंसिक विज्ञान प्रयोगशाला द्वारा याचिकाकर्ता को सामग्री की प्रामाणिकता के बारे में बहस करने और विरोध करने का अवसर दिए बिना और बिना किसी भी विचारणीय तथ्य को ध्यान में रखे बिना, याचिकाकर्ता को दंड देने का एकमात्र आधार है।

10. विद्वान एकल न्यायाधीश के समक्ष अपीलकर्ता की ओर से उपर्युक्त प्रस्तुतीकरण के अवलोकन से पता चला कि उसने आरोप संख्या 1 पर भी प्रश्न उठाया था। इसलिए, विद्वान एकल न्यायाधीश ने मामले को वापस भेज दिया है। निस्संदेह, विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा "बिहार पेंशन नियमावली की धारा 43(ख) के तहत कार्यवाही शुरू की जा सकती है" के संदर्भ में त्रुटि हुई है।

धारा 43(ख) के उल्लेख में त्रुटि है, इसे नियम 43(ख) होना चाहिए था। इसके अलावा, पिछले पैराग्राफ में, विद्वान एकल न्यायाधीश ने निम्नलिखित आदेश पारित किया:

> "इस मामले को देखते हुए, आरोपित दंड आदेश को वर्तमान के लिए रद्द किया जाता है और मामला जाँच अधिकारी को वापस भेजा जाता है ताकि वह आरोप संख्या 1 के संबंध में केवल तभी जाँच करे जब याचिकाकर्ता को फोरेंसिक विज्ञान प्रयोगशाला की रिपोर्ट दी जाए और उसके द्वारा जो भी दलील दी गई है, उस पर कानून के अनुसार विचार किया जाएगा।"

11. ये अंतिम दो पैराग्राफ एक-दूसरे के विरोधाभासी हैं। इसलिए, बिहार पेंशन नियमावली के नियम 43(ख) के तहत कार्यवाही शुरू करना उचित नहीं है। दूसरे शब्दों में, अनुशासनात्मक प्राधिकारी द्वारा जो भी आरोप संख्या 1 तैयार किया गया था और जिसकी जाँच की गई थी, उसमें इस हद तक कमी है कि याचिकाकर्ता को फोरेंसिक विज्ञान प्रयोगशाला की रिपोर्ट का अवलोकन करने का अवसर नहीं दिया गया था। अतः, जहाँ तक आरोप संख्या 1 का संबंध है, बिहार पेंशन नियमावली के नियम 43(ख) के अंतर्गत जाँच शुरू करने का प्रश्न ही उचित नहीं है। इस दृष्टि से विद्वान एकल न्यायाधीश के आदेश को संशोधित किया जाता है और अनुशासनात्मक प्राधिकारी को पूर्व में 04.02.2011 को निर्धारित आरोप संख्या 1 के आधार पर जाँच शुरू करने का निर्देश दिया जाता है।

12. वर्तमान लेटर्स पेटेंट अपील में, अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि अपीलकर्ता को ऐसी कोई वित्तीय हानि नहीं हुई है जिससे बिहार पेंशन नियमावली के नियम 43(ख) को लागू करने या लागू करने की आवश्यकता हो। नियम 43(ख) को पुनः प्रस्तुत करना आवश्यक है (असंशोधित) जो इस प्रकार है:

> "43(ख)। राज्य सरकार अपने पास पेंशन या उसके किसी भाग को, चाहे स्थायी रूप से या किसी निर्दिष्ट अवधि के लिए, रोकने या वापस लेने का अधिकार सुरक्षित रखती है, और पेंशनभोगी से सरकार को हुई किसी भी आर्थिक हानि की पूरी या आंशिक वसूली का आदेश देने का अधिकार सुरक्षित रखती है, <u>यदि पेंशनभोगी विभागीय या न्यायिक कार्यवाही में गंभीर कदाचार का दोषी पाया जाता है, या उसने अपनी सेवा के दौरान, जिसमें सेवानिवृत्ति के बाद पुनर्नियोजन पर की गई सेवा भी शामिल है, कदाचार या लापरवाही से सरकार को आर्थिक हानि पहुँचाई है</u>:
>
> बशर्ते कि-
>
> (क) ऐसी विभागीय कार्यवाही, यदि सरकारी कर्मचारी के सेवानिवृत्ति से पहले या पुनर्नियोजन के दौरान ड्यूटी पर रहते हुए शुरू नहीं की गई हो,
>
> (i) राज्य सरकार की मंजूरी के बिना शुरू नहीं की जाएगी;

(ii) ऐसी घटना के संबंध में होगी जो चार साल से अधिक समय पहले हुई हो ऐसी कार्यवाही शुरू होने से वर्षों पहले; और

(iii) ऐसे प्राधिकारी द्वारा और ऐसे स्थान या स्थानों पर संचालित की जाएगी जैसा राज्य सरकार निर्देश दे और उन कार्यवाहियों पर लागू प्रक्रिया के अनुसार होगी जिन पर सेवा से बर्खास्तगी का आदेश दिया जा सकता है;

(ख) न्यायिक कार्यवाही, यदि सरकारी कर्मचारी के सेवानिवृत्ति से पहले या पुनर्नियुक्ति के दौरान ड्यूटी पर रहते हुए शुरू नहीं की गई है, तो खंड (क) के उप-खंड (ii) के अनुसार शुरू की गई होगी; और

(ग) अंतिम आदेश पारित करने से पहले बिहार लोक सेवा आयोग से परामर्श किया जाएगा।

रेखांकित प्रदत्त

13. उपर्युक्त प्रावधान को पढ़ने से, यह स्पष्ट रूप से स्पष्ट है कि नियम 43(ख) के तहत कोई भी कार्रवाई करने के लिए, यह अनिवार्य नहीं है कि राज्य के खजाने को वित्तीय नुकसान हुआ हो, अन्यथा नियम 43(ख) के तहत कार्रवाई की जा सकती है, भले ही 'या' - प्रयुक्त भाषा को ध्यान में रखते हुए। उपर्युक्त तर्कों के समर्थन में, विद्वान अपीलकर्ता के वकील ने ऊपर उद्धृत चार निर्णयों का हवाला दिया। चारों निर्णय इस तथ्य के मद्देनजर अलग-अलग हैं कि इनमें बिहार पेंशन नियमावली (असंशोधित) के

नियम 43(ख) की कोई व्याख्या नहीं की गई है। वास्तव में, एल.पी.ए. संख्या 1682/2018 में पारित दिनांक 06.02.2023 का आदेश मामले के तथ्यात्मक पहलू पर अलग-अलग है। उस मामले में, प्रतिवादी कुमार अजीत सिंह को नियम 43(ख) के तहत इस तथ्य पर दंडित किया गया था कि राज्य के खजाने को 3.5 लाख रुपये की वित्तीय हानि हुई थी। हालाँकि, इस बात पर कोई चर्चा या विश्लेषण नहीं किया गया कि जाँच अधिकारी/अनुशासनात्मक अधिकारी इस निष्कर्ष पर कैसे पहुँचे कि 3.5 लाख रुपये की वित्तीय हानि का निर्धारण किया गया था। इसलिए, उपर्युक्त निर्णय इस मामले पर लागू नहीं होता है।

14. जहाँ तक रिपोर्ट किए गए निर्णय 2010(3) का संबंध है। पीएलजेआर और 2007 (3) बीएलजेआर के संबंध में, समन्वय पीठ ने बिहार पेंशन नियमावली के असंशोधित नियम 43(बी) की व्याख्या नहीं की है। इसलिए, हमें यह मानना होगा कि उद्धृत दोनों निर्णय (रिपोर्ट किए गए) प्रति इंक्यूरियम में दिए गए निर्णय हैं।

15. सर्वोच्च न्यायालय ने **(2003)7 एससीसी 197** में **पैराग्राफ-23** में रिपोर्ट किए गए **संभागीय नियंत्रक, केएसआरटीसी बनाम महादेव शेट्टी एवं अन्य** के मामले में, , यह निम्नानुसार माना है:

> "23. जहाँ तक नागेश केस [(1997) 8 एससीसी 349] का संबंध है, जिस पर दावेदार ने भरोसा किया है, केवल यह ध्यान देने योग्य है कि निर्णय राशि तय करने के आधार को इंगित नहीं करता है क्योंकि न्यायालय द्वारा एकमुश्त राशि तय की गई थी।

निर्णय सामान्यतः न्यायालय के समक्ष मामले पर एक निर्णय होता है, जबकि निर्णय में निहित सिद्धांत बाद में निर्णय के लिए आने वाले मामले में एक मिसाल के रूप में बाध्यकारी होगा। इसलिए, निर्णय को बाद के किसी मामले में लागू करते समय, उससे संबंधित न्यायालय को पिछले निर्णय द्वारा निर्धारित सिद्धांत का सावधानीपूर्वक पता लगाने का प्रयास करना चाहिए। एक निर्णय अक्सर उस मामले से संबंधित प्रश्न पर आधारित होता है जिसमें वह दिया गया है। किसी मिसाल के दायरे और अधिकार को कभी भी किसी दी गई स्थिति की आवश्यकताओं से अनावश्यक रूप से विस्तारित नहीं किया जाना चाहिए। एक प्राधिकार के रूप में एकमात्र बाध्यकारी चीज बाद के न्यायाधीश पर वह सिद्धांत है जिस पर मामले का निर्णय लिया गया था। वे कथन जो निर्णय अनुपात का हिस्सा नहीं हैं, उन्हें ओबिटर डिक्टा के रूप में पहचाना जाता है और वे आधिकारिक नहीं होते हैं। सिद्धांत को खोजने का कार्य कठिनाई से भरा है क्योंकि तथ्यों की जांच के बिना यह अनुमान नहीं लगाया जा सकता है कि सामाजिक न्याय के उपाय के रूप में एक समान निर्देश दिया जाना चाहिए या नहीं। बिना किसी तर्क के और बिना किसी मौन पूर्वधारणा का कोई महत्व

नहीं है। केवल आकस्मिक अभिव्यक्तियों का कोई महत्व नहीं होता, और न ही किसी न्यायाधीश की हर अभिव्यक्ति, चाहे वह कितनी भी प्रतिष्ठित क्यों न हो, अधिकार के भार वाले एक बहिष्कृत कथन के रूप में मानी जा सकती है।"

16. सर जॉन सैल्मंड द्वारा अपने 'न्यायशास्त्र पर ग्रंथ' में उद्धृत 'पर इनक्यूरियम' के घटक ने उन परिस्थितियों को सटीक रूप से बताया है जिनके तहत किसी मिसाल को 'पर इनक्यूरियम' माना जा सकता है। यह कहा गया है कि कोई मिसाल बाध्यकारी नहीं है जिसके लिए उसे किसी क़ानून या किसी नियम की अज्ञानता में प्रस्तुत किया गया हो जिसमें क़ानून या प्रत्यायोजित विधान का बल हो।

17. वर्तमान मामले में, नियम 43(ख) (असंशोधित) पर समन्वय पीठ ने ध्यान नहीं दिया है और यह व्याख्या नहीं की है कि क्या केवल वित्तीय हानि ही नियम 43(ख) (असंशोधित नियम) को लागू करने का मानदंड है या नहीं। असंशोधित नियम 43(ख) ने यह प्रतिबंधित नहीं किया है कि इसे केवल तभी लागू किया जा सकता है जब राज्य सरकार को किसी कर्मचारी/सरकारी कर्मचारी द्वारा कोई वित्तीय हानि हुई हो। दूसरी ओर, यदि पेंशनभोगी **विभागीय या न्यायिक कार्यवाही में <u>गंभीर कदाचार का दोषी पाया जाता है</u> या सरकार को आर्थिक नुकसान पहुँचाता है।**

रेखांकित किया गया

18. सर्वोच्च न्यायालय ने **आंध्र प्रदेश सरकार और अन्य बनाम बी. सत्यनारायण राव (2000) 4 एससीसी 262** में रिपोर्ट किए गए मामले में निम्नलिखित टिप्पणी की:

> "पर इनक्यूरियम का नियम तब लागू हो सकता है जब न्यायालय उसी मुद्दे पर उसी न्यायालय या उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए बाध्यकारी पूर्व उदाहरण पर विचार करने से चूक जाता है या जब कोई न्यायालय उस मुद्दे पर निर्णय करते समय किसी क़ानून पर विचार करने से चूक जाता है।"

19. वर्तमान मामले में, समन्वय पीठ ने नियम 43(ख) के अंतर्गत प्रयुक्त भाषा पर इस सीमा तक विचार नहीं किया है कि इसका प्रयोग केवल राज्य के खजाने को हुई आर्थिक हानि या गंभीर कदाचार आदि के संबंध में ही किया जाना चाहिए।

20. **थोटा शेषारथम्मा एवं अन्य बनाम थोटा मणिक्यम्मा (मृत)** द्वारा कानूनी प्रतिनिधियों द्वारा **(1991) 4 एससीसी 312** में रिपोर्ट किए गए मामले में, सर्वोच्च न्यायालय की दो न्यायाधीशों की पीठ ने यह माना कि श्री कर्मी बनाम अमरू, (1972) 4 एससीसी 86 के मामले में तीन न्यायाधीशों की पीठ ने प्रति अपराध पर निर्णय दिया और निम्नलिखित टिप्पणी की।

> "..... यह अधिनियम की धारा 14(1) या 14(2) के किसी भी प्रावधान का उल्लेख किए बिना एक संक्षिप्त निर्णय है। निर्णय में न तो इस संबंध में उठाए गए किसी तर्क का कोई उल्लेख है और न ही सेठ बद्री पार्षद बनाम श्रीमती

कंसो देवी के पूर्व निर्णय का कोई उल्लेख है। श्रीमती कर्मी के निर्णय को अधिनियम की धारा 14(1) और 14(2) के दायरे और दायरे पर एक प्राधिकार के रूप में नहीं माना जा सकता है।"

21. कानून और नियमों के विपरीत कोई निर्णय मिसाल नहीं बन सकता जैसा कि **भारत संघ बनाम एस के सहगल, (2007)14 एससीसी 556** के मामले में माना गया है। **पैसनर बनाम गुडरिच मामले में (1955)2 ऑल - ईआर 530** में संदर्भित **आईसीआईसीआई बैंक लिमिटेड और अन्य बनाम ग्रेटर बॉम्बे नगर निगम और अन्य** मामले में **एआईआर 2005 एससीसी 3315** में रिपोर्ट किया गया। पैसनर के मामले में लॉर्ड डेनिंग ने अपने फैसले में निम्नलिखित निर्णय दिया::-

"जब इस न्यायालय के न्यायाधीश संसद के किसी अधिनियम की व्याख्या पर निर्णय देते हैं, तो वह निर्णय स्वयं उन पर और उनके उत्तराधिकारियों पर बाध्यकारी होता है। लेकिन न्यायाधीश निर्णय देते समय जिन शब्दों का प्रयोग करते हैं, वे बाध्यकारी नहीं होते। यह अक्सर एक बहुत ही सूक्ष्म अंतर होता है, क्योंकि निर्णय केवल शब्दों में ही व्यक्त किया जा सकता है। फिर भी, यह एक वास्तविक अंतर है जिसे सबसे अच्छी तरह से इस बात को ध्यान में रखकर समझा जा सकता है कि किसी क़ानून की व्याख्या करते समय, न्यायालय का एकमात्र कार्य क़ानून के शब्दों को किसी दी गई स्थिति पर लागू करना है। एक बार उस स्थिति पर निर्णय हो जाने के बाद, मिसाल के सिद्धांत के अनुसार हमें किसी भी समान

स्थिति में उसी तरह क़ानून को लागू करना होगा; लेकिन किसी भिन्न स्थिति में नहीं। जब भी कोई नई स्थिति उत्पन्न होती है, जो पिछले निर्णयों द्वारा कवर नहीं की जाती है, तो न्यायालयों को क़ानून के अनुसार, न कि न्यायाधीशों के शब्दों के अनुसार।"

(रेखांकित प्रदत्त)

22. यह भी एक सामान्य नियम है कि किसी न्यायालय के समक्ष न उठाया गया कोई मुद्दा उक्त प्रश्न पर अधिकार नहीं होगा। **एओएन ग्रेनाइट्स बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, (2001) 3 एससीसी 537** में, यह इस प्रकार कहा गया है:

"इस प्रश्न पर लैंकेस्टर मोटर कंपनी (लंदन) लिमिटेड बनाम ब्रेमथ लिमिटेड में अपील न्यायालय द्वारा विचार किया गया था, और यह निर्धारित किया गया था कि जब प्रश्न पर कोई विचार नहीं किया गया था, तो निर्णय को बाध्यकारी नहीं कहा जा सकता है और पूर्ववर्ती मौन और बिना किसी तर्क के बिना किसी महत्व के हैं।:"

23. वर्तमान मामले में समन्वय पीठ द्वारा बिहार पेंशन के नियम 43(बी) में प्रयुक्त ऐसे शब्दों पर ध्यान न देना मौन के सिद्धांतों को आकर्षित करने के बराबर है।

24. **उत्तर प्रदेश राज्य बनाम सिंथेटिक्स एंड केमिकल्स लिमिटेड (1991) 4 एससीसी 139**, अनुच्छेद 40 और 41 इस प्रकार हैं:

"40. 'इन्क्यूरिया' का शाब्दिक अर्थ 'लापरवाही' है। व्यवहार में, पर इन्क्यूरियम का अर्थ प्रति अज्ञानता प्रतीत होता है। अंग्रेजी अदालतों ने इस सिद्धांत को स्टेयर डेसिसिस के नियम में ढील देते हुए विकसित किया है। 'कानून में उद्धृत करने योग्य' शब्द को तब टाला और अनदेखा किया जाता है जब उसे 'किसी क़ानून या अन्य बाध्यकारी प्राधिकरण की अज्ञानता में' प्रस्तुत किया जाता है। (यंग बनाम ब्रिस्टल एयरप्लेन कंपनी लिमिटेड [(1944) 1 केबी 718: (1944) 2 ऑल ईआर 293])। इस न्यायालय द्वारा संविधान के अनुच्छेद 141 की व्याख्या करते समय इसे स्वीकार, अनुमोदित और अपनाया गया है, जो कानून के रूप में मिसालों के सिद्धांत को समाहित करता है। जयश्री साहू बनाम राजदेवन दुबे [(1962) 2 एससीआर 558 : एआईआर 1962 एससी 83] में, इस न्यायालय ने परस्पर विरोधी निर्णयों को पीठ के समक्ष प्रस्तुत करते समय अपनाई जाने वाली प्रक्रिया की ओर इशारा करते हुए, हेल्सबरी के इंग्लैंड के कानूनों से एक अंश उद्धृत किया, जिसमें उन अपवादों में से एक को शामिल किया गया है जो अपीलीय न्यायालय के निर्णय के बाध्यकारी न होने पर लागू होते हैं।

41. क्या यह सिद्धांत ऐसे विधि के निष्कर्ष पर लागू होता है, जिस पर न तो कोई विचार किया गया था और न ही उससे पहले कोई विचार किया गया था। दूसरे शब्दों में, क्या ऐसे निष्कर्षों को विधि की घोषणा माना जा सकता है? यहाँ भी अंग्रेजी न्यायालयों और न्यायविदों ने पूर्व उदाहरणों के नियम का एक अपवाद निकाला है। इसे उप-मौन नियम के रूप में समझाया गया है। "एक निर्णय, तकनीकी अर्थ में, जो उस वाक्यांश से जुड़ गया है, तब होता है जब निर्णय में शामिल कानून का विशेष बिंदु न्यायालय द्वारा समझा नहीं जाता है या उसके ध्यान में नहीं आता है।" (सैल्मंड ऑन ज्यूरिसप्रूडेंस 12 वां संस्करण, पृष्ठ 153)। लैंकेस्टर मोटर कंपनी (लंदन) लिमिटेड बनाम ब्रेमिथ लिमिटेड [(1941) 1 केबी 675, 677 : (1941) 2 ऑल ईआर 11] में न्यायालय ने पहले के निर्णय से बाध्य महसूस नहीं किया क्योंकि यह 'बिना किसी तर्क के, नियम के महत्वपूर्ण शब्दों के संदर्भ के बिना और प्राधिकार के किसी उद्धरण के बिना' दिया गया था। इसे इस न्यायालय द्वारा दिल्ली नगर निगम बनाम गुरनाम कौर में अनुमोदित किया गया था। [(1989) 1 एससीसी 101] पीठ ने कहा कि, 'पूर्ववर्ती उदाहरण और बिना तर्क के महत्वहीन हैं'। इस प्रकार

न्यायालयों ने अन्यायपूर्ण मिसालों द्वारा किए गए अन्याय से राहत पाने के लिए इस सिद्धांत का सहारा लिया है। ऐसा निर्णय जो स्पष्ट न हो और न ही वह तर्कों पर आधारित हो और न ही किसी मुद्दे पर विचार के आधार पर आगे बढ़े, उसे अनुच्छेद 141 के अनुसार बाध्यकारी प्रभाव वाला घोषित कानून नहीं माना जा सकता। एकरूपता और स्थिरता न्यायिक अनुशासन के मूल हैं। लेकिन जो बिना किसी कारण के निर्णय में छूट जाता है, वह अनुपात निर्णायक नहीं है। बी. शामराव बनाम पांडिचेरी संघ राज्य क्षेत्र [एआईआर 1967 एससी 1480 : (1967) 2 एससीआर 650 : 20 एसटीसी 215] में यह टिप्पणी की गई थी, 'यह कहना सामान्य बात है कि कोई निर्णय बाध्यकारी है, अपने निष्कर्षों के कारण नहीं, बल्कि अपने अनुपात और उसमें निहित सिद्धांतों के कारण।' बिना सोचे-समझे या बिना किसी कारण के पूर्व में की गई कोई भी घोषणा या निष्कर्ष, कानून या प्राधिकरण की घोषणा नहीं मानी जा सकती, जो सामान्य प्रकृति का हो और मिसाल के तौर पर बाध्यकारी हो। असहमति या खारिज करने में संयम स्थिरता और एकरूपता के लिए है, लेकिन उचित सीमाओं से परे कठोरता कानून के विकास के लिए हानिकारक है। 'सब-साइलेंटियो' और 'पर इनक्यूरियम'

जैसे निर्णय बाध्यकारी नहीं हैं। सब-साइलेंटियो निर्णय तब लागू होते हैं जब निर्णय में शामिल कानून का कोई विशेष बिंदु न्यायालय द्वारा ध्यान में नहीं लिया जाता। ऐसा कोई बिंदु जिस पर न्यायालय द्वारा तर्क या विचार नहीं किया जाता, उसे सब-साइलेंटियो कहा जाता है।

25. समग्र विचारणीय बिंदु यह है कि क्या उद्धृत समन्वय पीठ का निर्णय याचिकाकर्ता के मामले पर लागू होता है या नहीं? यह ध्यान देने योग्य है कि समन्वय पीठ ने बिहार पेंशन नियमावली के असंशोधित नियम 43(ख) में प्रयुक्त शब्दों पर ध्यान नहीं दिया है और न ही उनकी व्याख्या की है। दूसरे शब्दों में, यह कोई एक मानदंड नहीं है कि कर्मचारी या सरकारी सेवक द्वारा की गई आर्थिक हानि के संबंध में कथित आरोपों की जाँच की जाए ताकि नियम 43(ख) (असंशोधित नियम) को लागू किया जा सके। नियम में प्रयुक्त भाषा के आलोक में नियम 43(ख) को लागू करने के लिए अन्य पहलू भी आवश्यक हैं।

26. इन तथ्यों और परिस्थितियों को देखते हुए, वर्तमान एल.पी.ए. को उपरोक्त सीमा तक आंशिक रूप से अनुमति दी जाती है।

27. इस स्तर पर, अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि जाँच कार्यवाही लंबित होने के कारण अपीलकर्ता के सेवानिवृत्ति लाभों का भुगतान नहीं किया जा रहा है। इसलिए, वह अनुरोध कर रहे हैं कि उचित समयावधि के भीतर जाँच पूरी करें। तदनुसार, संबंधित अनुशासनात्मक प्राधिकारी/ जांच प्राधिकारी को निर्देश दिया जाता है कि वे आरोप संख्या 1 के

संबंध में जाँच इस आदेश की प्राप्ति की तिथि से तीन माह के भीतर पूरी करें। यह भी स्पष्ट किया जाता है कि यदि किसी भी परिस्थिति में तत्कालीन जाँच अधिकारी उपलब्ध नहीं होते हैं, तो ऐसी स्थिति में अनुशासनात्मक प्राधिकारी को बिहार पेंशन नियमावली (असंशोधित) के नियम 43(ख) का अनुपालन करते हुए, आरोप संख्या 1, जो 04.02.2011 को तैयार किया गया था, के संबंध में जाँच करने के लिए नए जाँच अधिकारी की नियुक्ति करने की अनुमति है।

(पी. बी. भजंत्री , न्यायमूर्ति)

(रमेश चंद मालवीय, न्यायमूर्ति)

पी.एस./-

खंडन (डिस्क्लेमर)- स्थानीय भाषा में निर्णय के अनुवाद का आशय, पक्षकारों को इसे अपनी भाषा में समझने के उपयोग तक ही सीमित है और अन्य प्रयोजनार्थ इसका उपयोग नही किया जा सकता। समस्त व्यवहारिक, कार्यालयी, न्यायिक एवं सरकारी प्रयोजनार्थ, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा साथ ही निष्पादन तथा कार्यान्वयन के प्रयोजनार्थ अनुमान्य होगा।